॥ ओ३म् ॥

# विश्व परिवार

# वैदिक धर्म जोड़ता है-तोड़ता नहीं


लेखक :

आचार्य ब्र० नन्दकिशोर

सम्पादक :

आचार्य सत्यसिन्धु शास्त्री



सरस्वती साहित्य संस्थान

295, जागृति एन्कलेव, विकास मार्ग, दिल्ली-92,

(वैदिक लघु साहित्य के निर्माता)

*प्रकाशक*

**सरस्वती साहित्य संस्थान**
295, जागृति एन्क्लेव, विकास मार्ग, दिल्ली-92
दूरभाष : 2215 2435

●

*सहयोग :*

राव हरिश्चन्द्र आर्य
आर्यसमाज बीघोपुर, नारनौल, (हरियाणा)

●

*पुस्तक प्राप्ति स्थान :*

१. श्री मन्त्री परोपकारिणी सभा
अजमेर, (राजस्थान)
२. आर्यसमाज महावीर नगर भोपाल
३. आर्यसमाज परली बैजनाथ
जि० बीड, महाराष्ट्र
३. आर्ष गुरुकुल नर्मदापुरम
जि० होशंगाबाद, (मध्यप्रदेश)
४. श्री गणेशदास गरिमा गोयल
२७०४, गली पत्ते वाली, श्रद्धानन्द बाजार,
नया बाजार, दिल्ली-११०००६
५. **श्री वैद्य हंसराज जी,** कल्पतरु आश्रम, नेपाली फार्म,
पो० सत्यनारायण मंदिर, हरिद्वार रोड, जि. देहरादून (उत्तराखंड)

# वैदिक साहित्य प्रतिष्ठान

**२७०४, गली पत्ते वाली, श्रद्धानन्द बाजार,**
**नया बाजार, दिल्ली-११०००६**

●

प्रथम संस्करण : ११०० प्रतियाँ
फरवरी, सन् २०११

●

मूल्य : **दस रुपया**

●

शब्द संयोजक :
**वैदिक प्रेस,** कैलाशनगर, दिल्ली-३१

# दो शब्द

ईशप्रदत्त वेद का आदेश, उपदेश और निर्देश है कि **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** पूरे विश्व को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ बनाओ । वैदिक धर्म से जोड़ो, तोड़ो नहीं ।

यह संसार एक विश्वविद्यालय है, इसमें असंख्य प्राणी रहते हैं । यह सारा संसार चिड़िया के घोंसले के समान परिवार जैसा प्रतीत होता है। पक्षी आपस में प्रेम से रहते हैं, उसी प्रकार हम लोगों को प्रेम से रहना चाहिये । वैदिक धर्म जोड़ने का कार्य करता है तोड़ने का नहीं । वैदिक आदर्श परिवार एक यूनिट इकाई है। इस वैदिक परिवार से बालक का जन्म होता है, उस बालक का गुरुकुल में आचार्य द्वारा वेदारम्भ संस्कार होता है । आचार्य ब्रह्मचारी की इच्छा करता है, आत्म सम्बन्ध स्थापित करता है । आगे चलकर वह राज्य को सुव्यवस्थित चलाता है, शासन करता है, प्रजा से प्रेम करता है । जैसे राजर्षि विश्वामित्र और ऋषि वशिष्ठ ने श्री राम और भरत को चरित्रवान बनाकर राष्ट्र को समर्पित किया, समर्थ गुरु रामदास ने छत्रपति शिवा जी को बनाकर कुशल नेतृत्व दिया, उसी प्रकार से आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को शिक्षित करके राष्ट्र के लिए समर्पित किया । मैंने वेद मन्त्रों का चयन करके यह दिखाया है कि सभी परस्पर मिलजुल कर रहें, प्रेम करें, जैसा कि महाभारत काल में वैदिक मत एक था । महाभारत के पतन के बाद वैदिक धर्म लोप हुआ, पुनः महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वैदिक धर्म की परम्परा को जागृत किया। आर्यसमाज की नींव रखी, जो वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार कर रही है । वैदिक धर्म जोड़ता है, तोड़ता नहीं है। इस ट्रैक्ट का नामकरण किया है ।

गुरुकुल होशंगाबाद का प्रिय ब्रह्मचारी विपिन, आयु १५ वर्ष, पुत्र श्री सुरेन्द्र भदौरिया क्यारीपुरा जि० भिण्ड का अचानक अकाल मृत्यु से पूरा परिवार आश्चर्य चकित रह गये । यह छोटी सी पुस्तक प्रिय ब्र० विपिन को समर्पित–

**हसरत उन गुञ्चों पर जो बिन खिले मुरझा गये ।**

''**तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः**'' को ध्यान में रखकर ईश्वर का वरदान स्वीकार करता हूँ ।

**–आचार्य ब्र० नन्दकिशोर**

( १ )

## महाभारत काल में हम सब एक थे

देखो ! महाराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भूगोल के राजा, ऋषि-महर्षि आये थे । एक ही पाकशाला से भोजन किया करते थे । जब से ईसाई-मुसलमान आदि के मतमतान्तर चले, आपस में वैर-विरोध हुआ । उन्होंने मद्य-गोमांसादि का खाना स्वीकार किया, उसी समय से भोजनादि में बखेड़ा हो गया ।

( २ )

## महाभारत काल में पूरे विश्व में पारस्परिक सम्बन्ध था

देखो ! काबुल, कन्धार, ईरान, अमेरिका, यूरोप आदि देशों के राजाओं की कन्या गान्धारी, माद्री, उलोपी आदि के साथ आर्यावर्तदेशीय राजा-लोग विवाह करते थे । शकुनि आदि कौरव-पाडवों के साथ खाते-पीते थे । कुछ विरोध नहीं करते थे, क्योंकि उस समय सर्व-भूगोल में वेदोक्त एक मत था । उसी में सब की निष्ठा थी और एक दूसरे का सुख-दुःख हानि-लाभ आपस में अपने समझते थे, तभी भूगोल में सुख था। अब तो बहुत मत वाले होने से बहुत सा दुःख और विरोध बढ़ गया है । इसका निवारण करना बुद्धिमानों का काम है । परमात्मा सबके मन में सत्य मत का ऐसा अंकुर डाले कि जिससे मिथ्या मत शीघ्र ही प्रलय को प्राप्त हों । इसमें सब विद्वान् लोग विचार कर विरोध छोड़ के अविरुद्ध मत के स्वीकार से सब जने मिलकर सब के आनन्द को बढ़ायें ।

**महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश**
**दशम समुल्लास से उद्धृत**

# विश्व परिवार

## वैदिक धर्म जोड़ता है, तोड़ता नहीं

**यत्र विश्वं भवत्येकनीडम् ।** —यजु० ३२।८

यह सारा संसार चिड़िया के घोंसले के समान परिवार जैसा प्रतीत होता है ।

वैदिक धर्म वेदों पर आधारित है, वेद ईश्वर की वाणी अर्थात् मनुष्य मात्र का कल्याण करने वाला संविधान है । ईश्वर प्रदत्त संविधान के अनुसार ही मनुष्य एक दूसरे का कल्याण करता है, वैदिक धर्म का पालन करते हुए सृष्टि का प्रथम राजा महर्षि मनु, मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी, योगेश्वर श्रीकृष्णचन्द्र जी और महर्षि दयानन्द सरस्वती ने असंख्य मनुष्यों का कल्याण किया । पदे-पदे वेदों ने स्त्री पुरुषों के लिए संदेश, उपदेश और निर्देश दिया है कि तुम सब परस्पर एक दूसरे से प्रेम करो और मिलजुल कर रहो । वेदों में बहुत से मन्त्रों का उद्धरण पाया जाता है । जैसे कि—

**समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ ।**
**सं मातरिश्वा सं धाता समु देष्ट्री दधातु नौ ॥**

ऋ० १०।८५।४३-४६

वर और कन्या संकल्प लेकर बोले कि हे (**विश्वे देवाः**) इस यज्ञशाला में बैठे हुए विद्वान् लोगो ! आप हम दोनों को (**समञ्जन्तु**) निश्चय करके जानें कि हम अपनी प्रसन्नता पूर्वक गृहाश्रम में एकत्र रहने के लिए एक दूसरे को स्वीकार करते हैं कि (**नो**) हमारे दोनों के (**हृदयानि**) हृदय (**आपः**) जल के समान (सम्) शान्त और मिले हुए रहेंगे। जैसे (**मातरिश्वा**) प्राणवायु हमको प्रिय है वैसे (**सम्**) हम दोनों एक दूसरे से सदा प्रसन्न रहेंगे । जैसे (**धाता**) धारण करने हारा परमात्मा सब में (**सम्**) मिला हुआ सब जगत् को

धारण करता है, वैसे हम दोनों एक दूसरे को धारण करेंगे। जैसे ( **समुदेष्ट्री** ) उपदेश करनेहारा श्रोताओं से प्रीति करता है वैसे ( **नो** ) हमारे दोनों की आत्मा एक-दूसरे के साथ दृढ़ प्रेम को ( **दधातु** ) धारण करे।

दो कुओं के जल को एक साथ मिला देने से एक हो जाते हैं, उस जल को बड़े-बड़े वैज्ञानिक पृथक् नहीं कर सकते, इसी प्रकार दो प्राणियों के आपस में हृदय मिल गये हैं। संसार की कोई शक्ति हम दोनों को पृथक् नहीं कर सकती। हम दोनों को प्राण-शक्ति, धारण शक्ति और उपदेश शक्ति परस्पर कल्याणकारी हो।

## वर और वधू की आत्मीयता

तत्पश्चात् वर वधू के दक्षिण स्कन्धे पर से अपना दक्षिण हाथ ले के उससे वधू का हृदय स्पर्श करके निम्न मन्त्र बोले:

**वर–**

**ओ३म् मम व्रते ते हृदयं दधामि**
**मम चित्तमनु चितं ते अस्तु।**
**मम वाचमेकमना जुषस्त**
**प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्॥**

*अर्थ*–हे वधू ! ( **ते** ) तेरे ( **हृदयम्** ) अन्तःकरण और आत्मा को ( **मम** ) मेरे ( **व्रते** ) कर्म के अनुकूल ( **दधामि** ) धारण करता हूँ ( **मम** ) मेरे ( **चित्तम् अनु** ) चित्त के अनुकूल ( **ते** ) तेरा ( **चित्तम्** ) चित्त सदा ( **अस्तु** ) रहे, ( **मम** ) मेरी ( **वाचम्** ) वाणी को तू ( **एकमनाः** ) एकाग्रचित्त से ( **जुषस्व** ) सेवन किया कर। ( **प्रजापतिः** ) प्रजा का पालन करने वाला परमात्मा ( **त्वा** ) तुझ को ( **मह्यम्** ) मेरे लिये ( **नियुनक्तु** ) नियुक्त करे।

उसी प्रकार वधू भी अपने दक्षिण हाथ से वर के हृदय का स्पर्श करके इसी ऊपर लिखे हुए मन्त्र ( **ओ३म् मम व्रते ते हृदयं दधामि आदि** ) को बोले।

वैसे ही हे प्रिय वीर स्वामिन् ! आपका हृदय आत्मा और अन्तःकरण मेरे प्रियाचरण कर्म में धारण करती हूँ । मेरे चित्त के अनुकूल आपका चित्त सदा रहे । आप एकाग्र होके मेरी वाणी को जो कुछ मैं आपसे कहूँ उसका सेवन सदा किया कीजिये क्योंकि आज से प्रजापति परमात्मा ने आप को मेरे आधीन किया है । जैसे मुझको आप के आधीन किया है । अर्थात् इस प्रतिज्ञा के अनुकूल दोनों वर्ता करें, जिससे सर्वदा आनन्दित और कीर्तिमान प्रतिव्रता और स्त्रीव्रत होके सब प्रकार के व्यभिचार अप्रिय भाषणादि को छोड़ के परस्पर प्रीतियुक्त रहें ।

## वर द्वारा सास-ससुर, ननन्द और देवर के प्रति आत्मीयता का उपदेश

**सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्रवां भव ।**
**ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधिदेवृषु ॥**

ऋ० १०।८५।४६

हे वरानने ! तू ( **श्वशुरे** ) मेरे पिता जो कि तेरा श्वशुर है, उसमें प्रीति करके ( **सम्राज्ञी** ) सम्यक् प्रकाशमान चक्रवर्ती राजा की रानी के समान पक्षपात छोड़ के प्रवृत्त ( **भव** ) हो। ( **श्वश्रवाम्** ) मेरी माता जो कि तेरी सासु है, उसमें प्रेमयुक्त होके उसी की आज्ञा में ( **सम्राज्ञी** ) सम्यक् प्रकाशमान ( **भव** ) रहाकर । ( **ननानदरि** ) जो मेरी बहिन और तेरी ननन्द है उसमें भी ( **सम्राज्ञी** ) प्रीतियुक्त और ( **देवृषु** ) मेरे भाई तेरे देवर और ज्येष्ठ अथवा कनिष्ठ हैं उनमें भी ( **सम्राज्ञी** ) प्रीति से प्रकाशमान ( **अधिभव** ) अधिकार युक्त हो, अर्थात् सबसे अविरोध पूर्वक प्रीति से बर्ताव करे ।

## आचार्य की ब्रह्मचारी (शिष्य) के प्रति आत्मीयता

**आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः ।**
**तं रात्रीस्तिस्र उदरे बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः ॥**

—अथर्व० ११।५(७)।१

आचार्य उपयनय करता हुआ ब्रह्मचारी को अपने गर्भ में धारण करता है । उसे तीन रात्रि तक (तब तक ज्ञान, कर्म, उपासना विषयक) तीन प्रकार की अन्धकारों की अवस्था से गुजरकर वसु, रुद्र, क्रम से आदित्य का उदय नहीं हो जाता तब तक पेट में, अपने अन्दर, अपने कुल में धारण करता है। उस (विद्या से द्विजरूपेण) उत्पन्न हुए को देखने के लिए, दर्शन करने के लिए देवता आते हैं, अभिमुख हो इकट्ठे होते।

**ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं वि रक्षति ।**
**आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते ॥**

—अथर्व० ११।५(७)।१७

राष्ट्र का अधिकारी, ब्रह्मचर्य अर्थात् विद्याध्ययन और वीर्य संरक्षण रूप तप के द्वारा राष्ट्र का संरक्षण करता है । तथा आचार्य ब्रह्मचर्य के साथ वाले ब्रह्मचारी की इच्छा करता है ।

*संस्कारचन्द्रिका नामक ग्रन्थ में—*

## आचार्य तथा बालक की पारस्परिक प्रतिज्ञा

**ओ३म् मम व्रते ते हृदयं दधामि**
**मम चित्तमनुचितं ते अस्तु ।**
**मम वाचमेकमना जुषस्व**
**बृहस्पतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम् ॥**

(पार० कां० २, कं० २, १६)

यह मन्त्र आचार्य तथा शिष्य दोनों की एक-दूसरे के प्रति प्रतिज्ञा है । इस मन्त्र से इस बात पर विशेष प्रकाश पड़ता

है कि अनुशासन के लिए जिम्मेदारी का प्रश्न एकतरफा नहीं दो तरफा है । गुरु तथा शिष्य दोनों की एक-समान जिन्मेदारी है, दोनों को एक-दूसरे के प्रति सहयोग का व्रत लेना है ।

आचार्य उक्त प्रतिज्ञा मन्त्र बोले । पश्चात् बालक को बोलने की आज्ञा दे । अर्थात् हे शिष्य बालक ! तेरे हृदय को मैं अपने आधीन करता हूँ, तेरा चित्त मेरे चित्त के अनुकूल सदा रहे और तू मेरी वाणी को एकाग्रमन से प्रीति से सुनकर उसके अर्थ का सेवन किया कर, और आज से तेरी प्रतिज्ञा के अनुकूल बृहस्पति, परमात्मा तुझ को मुझ से युक्त करे ।

इसी प्रकार शिष्य भी आचार्य से प्रतिज्ञा करावे कि-हे आचार्य ! आपके हृदय को मैं अपने कर्म अर्थात् उत्तम शिक्षा और विद्या की उन्नति में धारण करता हूँ । मेरे चित्त के अनुकूल आपका चित्त सदा रहे । आप मेरी वाणी को एकाग्र होके सुनिये और परमात्मा मेरे लिये आपको सदा नियुक्त रक्खे ।

*संस्कारचन्द्रिका नामक ग्रन्थ में-*

## आचार्य तथा बालक का पारस्परिक परिचय

**आचार्योक्तिः**-को नामाऽसि ।। तेरा क्या नाम हे ?

**बालकोक्तिः**-(आसौ) अहम्भोः ।। जो नाम हो वह बोलकर उत्तर देवे ।

**आचार्यः**-कस्य ब्रह्मचार्यसि ।। तू किसका ब्रह्मचारी है?

**बालकः**-भवतः ।। आपका ब्रह्मचारी हूँ ।

आचार्य बालक की रक्षा के लिए निम्न मन्त्र का उच्चारण करे :

**इन्द्रस्य ब्रह्मचार्यस्यग्निराचार्यस्तवाहमाचार्यस्त व असौ ।**

(पार० कां० २२, कं० २२, २१)

***शब्दार्थ*-(इन्द्रस्य)** तू इन्द्र का **(ब्रह्मचारी असि)**

ब्रह्मचारी है, **( अग्निः )** अग्नि **( तव )** तेरा **( आचार्यः )** आचार्य है **( अहम् )** मैं **( तव )** तेरा **( आचार्यः )** आचार्य हूँ।

***भावार्थ***–आचार्य ने बालक से पूछा था कि तू किसका ब्रह्मचारी है ? बालक ने उत्तर दिया–मैं आपका ब्रह्मचारी हूँ। आचार्य कहते हैं–तू मेरा ब्रह्मचारी तो है ही, परन्तु तू समझ ले कि तू इन्द्र का, परमैश्वर्ययुक्त भगवान् का ब्रह्मचारी है, तू अग्नि आगे-आगे ही चलने की प्रेरणा देने वाली शक्ति का ब्रह्मचारी है । तूने मेरे आचार्यत्व में इन भावनाओं को लेकर अपने जीवन का विकास करना है ।

## गौ की नवजात बछड़े के प्रति आत्मीयता तथा ईश्वर द्वारा मनुष्यों को प्रेम करने का उपदेश

**सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः ।**
**अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या ॥**

–अथर्व० ३।३०।१

ईश्वर आज्ञा देता है कि "मैं तुम्हारे अन्दर सहृदयता, साम्मनस्य और अविद्वेष की भावना उत्पन्न करता हूँ, तुम एक-दूसरे से ऐसा प्रेम करो जैसा गाय अपने नवजात बछड़े के प्रति प्रीति रखती है ।

## पुत्र का माता-पिता के प्रति आत्मीयता

**अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः ।**
**जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम् ॥**

–अथर्व० ३।३०।२

पुत्र पिता का आज्ञाकारी हो, माता के मन को सन्तुष्ट करने वाला हो, पत्नी पति से शान्तिदायिनी मीठी वाणी बोले।

***विमर्श***–प्रीति-सम्पादन करने की इच्छावालों को अपने दिल और दिमाग को प्रीति भाजन के अनुकूल करना पड़ता है।

वाल्मीकीय रामायण में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का उदाहरण मिलता हे, पिता की आज्ञा का पालन करना, माता के मन को सन्तुष्ट करने वाला भगवती सीता पति रामचन्द्र के लिये स्वागतकारिणी मीठी वाणी का प्रयोग करती थी ।

## भाई भाई और बहन बहन से मीठे वचन बोले

**मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा ।**
**सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया ॥**

—अथर्व० ३।३०।३

भाई भाई से वैर न करे, बहिन बहिन से द्वेष न करे । सब एक गति और एक मति होकर चलें और सब परस्पर मीठे कल्याणकारी वचन बोलें ।

(क) जब आपस में भाई-भाई लड़ते हैं तभी तीसरा विदेशी आकर पञ्च बन बैठता है ।

आपस की फूट से कौरव, पाण्डव और यादवों का सत्यानाश हो गया सो तो हो गया, परन्तु अब तक भी वही रोग पीछे लगा है । न जाने यह भयंकर राक्षस कभी छूटेगा वा आर्यों को सब सुखों से छुड़ाकर दुःखसागर में डुबा मारेगा ।

उसी दुष्ट दुर्योधन गोत्र हत्यारे, स्वदेशविनाशक, नीच के दुष्ट मार्ग में आर्य लोग अब तक भी चलकर दुःख बढ़ा रहे हैं । परमेश्वर कृपा करे कि यह राजयोग हम आर्यों में से नष्ट हो जाये । महाभारत काल में वेद के अनुसार भाई से भाई द्वेष न करे, इस आदेश को भूल गये, इस कारण महाभारत का पतन हो गया ।

## पुत्र-पौत्रों के साथ आत्मीयता

अन्य मन्त्र में भी कहा है—

**इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम् ।**
**क्रीळन्तो पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे ॥**

—ऋ० १०।८५।४

हे स्त्री तथा पुरुष ! तुम दोनों मिलकर रहो । कभी भी पृथक् न होओ । पुत्र-पौत्रों से खेलते हुए तथा प्रसन्न वदन होकर अपने घर में पूर्ण आयु को भोगो ।

## परमेश्वर सत्य ज्ञान की स्थापना करो

येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः ।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः ॥

—अथर्व० ३।३०।४

जिस वेद ज्ञान अथवा परमेश्वर सत्य ज्ञान से देवता एक-दूसरे से पृथक् नहीं होते और न द्वेष करते हैं, मैं (परमेश्वर) उसी ब्रह्म (वेद) ज्ञान की तुम्हारे घरों में स्थापना करता हूँ जो सबका सांझा ज्ञान है ।

## एक दूसरे का सम्मान करते हुए उदारवान बनो

ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः ।
अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत सध्रीचीनान्वः संमनसस्कृणोमि ॥

—अथर्व० ३।३०।५

बड़े बनने की इच्छावालो ! दिलवाले (समझवाले), ज्ञानी तथा उदार बनो । मिलकर सिद्धि प्राप्त करो । एक दूसरे के लिए सुन्दर वचन बोलते हुए आओ, मैं तुम्हें परस्पर का सहायक और एक दिलवाला बनाता हूँ ।

## हम सब मिलकर (अग्नि) भगवान् की पूजा करें

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि ।
...ञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः ॥ —अथर्व० ३।३०।६

तुम्हारी प्याऊ (पानी पीने के स्थान) एक हों, तुम्हारा ... एक हो । मैं तुम्हें एक जुए में जुड़ने की आज्ञा देता हूँ। ...थ की नाभि में अरे लगे होते हैं, वैसे तुम सब मिलकर

भगवान् की पूजा करो अर्थात् एक साथ बैठकर अग्नि जलाओ।

## पारस्परिक एकता और सौहार्द

सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोम्येकश्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान् ।
देवा ईवामृतं रक्षमाणाः सायं प्रातः सौमनसो वो अस्तु ॥

—अथर्व० ३।३०।७

मैं तुम सबको एक-दूसरे का साथी, एक मनवाला और एक-सा भोजनवाला बनाता हूँ । देवताओं की भांति अमर जीवन की रक्षा के लिए तुम सब सायं-प्रातः परस्पर के प्रेम और शुभ विचारों को बढ़ाओ ।

पारस्परिक एकता और सौहार्द की आवश्यकता अनुभव करते हुए समाज के सदस्य भी ऐसी ही इच्छा अभिव्यक्त करते रहे ।

## अपने और पराये के प्रति प्रीति हो

संज्ञानं नः स्वेभिः संज्ञानमरणेभिः ।
संज्ञानमश्विना युवमिहास्मासु नि यच्छतम् ॥

—अथर्व० ७।५२।१

हमारी अपनों के प्रति प्रीति हो, परायों के प्रति भी प्रीति हो । हे अश्वी देवो, तुम हमें संज्ञान या परस्पर मिलकर रहने का गुण प्रदान करो ।

## अपने और पराये के साथ एकमत्य ( विचार )

सं जानामहै मनसा सं चिकित्वा मा युष्महि मनसा दैव्येन ।
मा घोषा उत्थुर्बहुले विनिर्हते मेषुः पप्तदिन्द्रस्याहन्यागते ॥

—अथर्व० ७।५२।२

अपनों के साथ हमारा ऐकमत्य हो, परायों के साथ ऐकमत्य हो । हे द्यावापृथिवी-रूप अश्वी-युगल, जैसे तुम परस्पर एक मत होकर कार्य करते हो, वैसे ही हमारे अन्दर भी ऐकमत्य उत्पन्न करो । हम सब मन से एक हों विचार से एक हों, दिव्य मन से हम अलग न हों । हमारे बीच में परस्पर मारकाट न मचे, वैमनस्य के घोष न उत्पन्न हों ।

## सम्पूर्ण प्राणिमात्र का प्यारा बनूं

**प्रियो देवानां भूयासम् । प्रियः प्रजानां भूयासम् ।**
**प्रियः पशूनां भूयासम् । प्रियः समानानां भूयासम् ॥**

—अथर्व० १७।१।२-५

मैं देवताओं, (विद्वानों) का प्यारा बनूं, प्रजा का प्यारा बनूं, पशुओं का प्यारा बनूं और मैं अपने समानों में प्यारा बनूं।

## सम्पूर्ण चतुर्वर्ण जनों में व्यवहार कैसा हो

**प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु ।**
**प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्र उतार्ये ॥**

—अथर्व० १९।६३।१

अर्थात् मुझको ब्राह्मणों में प्रिय कीजिये, क्षत्रियों में प्रिय कीजिये, वैश्यों में प्रिय कीजिये और शूद्रों में प्रिय कीजिये ।

अथर्ववेद में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में प्रिय करने की प्रार्थना कर पूरी की गई है ।

इसी प्रकार से यजुर्वेद के मन्त्र में भी कहा है—हे प्रभो! चारों वर्णों में मेरी रुचि हो, अर्थात् मैं सबसे प्रेम करूं और सभी मुझ से प्रेम करें । दोनों में विरोध नहीं और समानता भी नहीं, अपितु दोनों मन्त्र एक दूसरे के पूरक हैं । इस प्रकार वैदिक धर्म विश्व परिवार होते हुए भी जोड़ता है, तोड़ता नहीं है ।

**रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचꣳराजसु नस्कृधि ।**
**रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम् ॥**

—यजु० १८।४८

अन्त में पुनः कहा है—

**प्रियः प्रजानां भूयासम् ।** —अथर्व० १७।१।३

मैं सम्पूर्ण प्रजा का प्यारा बनूं ।

हे परमात्मन् ! आप हम लोगों के ब्रह्मवेत्ता विद्वानों में प्रीति से प्रीति को स्थापित करो, हम लोगों के क्षत्रियों में प्रीति से प्रीति को स्थापित करो । प्रजाजनों में हुए वैश्यों में तथा शूद्रों में प्रीति से प्रीति को और मुझ में भी प्रीति से प्रीति को स्थापित कीजिये।

अर्थात् उस मानव मात्र के प्रेम से मुझ में भी कान्ति उत्पन्न कीजिये।

## सम्पूर्ण प्राणिमात्र को मित्र की दृष्टि से देखूं

**दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्।**
**मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे ।**
**मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे ॥** यजु० ३६।१८

हे दुःख निवारक प्रभो ! मुझे ऐसा दृढ़ बनाओ कि सब लोग मुझे मित्र की दृष्टि से देखें । मैं भी सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखता हूँ और हम सब लोग मिलकर परस्पर प्रेम से भरी मित्र की दृष्टि से देखें ।

**यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति ।**
**सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति ॥** यजु० ४०।६

जो सब प्राणियों को स्वात्मवत् प्रीति से अपने में ही अनुभव करता है और सब प्राणियों में आत्मवत् व्यवहार को स्थापित करता है, उसको लेशमात्र भी संशय नहीं होता है ।

**यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः ।**
**तत्र को मोहः कः शोकऽएकत्वमनुपश्यतः ॥** यजु० ४०।७

जो सब प्राणियों को अपने सदृश जानता है, वह एकत्व अनुभव करने वाला शोक और मोह के दुस्तर सागर से पार हो जाता है । फिर शोक और मोह उस स्थित प्रज्ञ को आत्मा एवं अन्त:करण को किसी भी प्रकार विचलित नहीं कर सकते ।

**सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ।**

सारी दिशायें मेरे मित्र हों ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्योद्देश्यरत्नमाला में लिखते हैं कि–

**नमस्ते**

मैं तुम्हारा मान्य करता हूँ ।

महर्षि दयानन्द जी ने यजुर्वेद के १६वें अध्याय के ३२वें मन्त्र में इसी प्रकार का लिखा है–

## कोई छोटा नहीं, कोई बड़ा नहीं, सबका सम्मान करो

**नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च ।**
**नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च ॥**

परस्पर मिलते समय सत्कार करना हो तब 'नमस्ते' इस वाक्य का उच्चारण करके छोटे–बड़ों, छोटों, नीच–उत्तमों, उत्तम–नीचों और क्षत्रियादि ब्राह्मणों वा ब्राह्मणादि क्षत्रियादिकों का निरन्तर सत्कार करे । सब लोग इसी वेदोक्त प्रमाण से सर्वत्र शिष्टाचार में इसी वाक्य (नमस्ते) का प्रयोग करके परस्पर एक दूसरे का सत्कार करने से प्रसन्न होवें ।

## पारस्परिक प्रीति

**तुलसी मीठे वचन से सुख उपजे चहुं ओर ।**
**वशीकरण एक मन्त्र है तज दे वचन कठोर ॥**

वेदों का सिद्धान्त तलस्पर्शी और हृदयस्पर्शी है ।

**मधुमन्मे निक्रमणं मधुमन्मे परायणम् ।**
**वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसंदृशः ॥**

–अथर्व० १।३४।३

मेरा आना और जाना मधुर हो, मैं वाणी से मधुर बोलूं, मैं शहद के समान मीठा हो जाऊं ।

**जिह्वाया अग्रे मधु मे जिह्वामूले मधूलकम् ।**
**ममेदह क्रतावसो मम चित्तमुपायसि ॥**

मेरा जिह्वा के अग्रभाग में मधुमय हो और जिह्वा के मूल में मधुरता हो । मेरे कार्य तथा मन में भी मधुरता का वास हो।

**यद्वदामि मधुमत्तद्वदामि यदीक्षे तद्वनन्ति मा ।**
**त्विषीमानस्मि जूतिमानवान्यान्हन्मि दोधतः ॥**

—ऋ० १२।१।५८

जिससे बात करता हूँ मीठा बोलता हूँ, जिसकी ओर दृष्टि करता हूँ वह मुझ से स्नेह करने लगता है । एक ओर तो मेरा यह मधुर रूप है, किन्तु साथ ही ऐसा तेजस्वी और वेगवान् भी हूँ कि जो दुष्ट मुझे अपना क्रोध दिखाते हैं, उन्हें बात की बात में मार गिराता हूँ ।

वेदों के मन्त्र द्वारा संस्कारविधि के विवाह प्रकरण में वधू के लिये प्रीति अनुसार उपदेश किया गया है ।

## वैदिक समाज आत्म निर्भर की कामना

समाज व्यक्तियों पर है और व्यक्ति की उन्नति समाज के आश्रय से होती है । व्यक्ति की उन्नति ही क्यों, व्यक्ति का निर्माण भी समाज द्वारा होता है । वैदिक धर्म में, इसी कारण, समाज का बहुत महत्व है । ऋग्वेद का अन्तिम सूक्त इस समाजवाद का स्पष्ट प्रतिपादन करता है, किन्तु समाज का मूल व्यक्ति है, उन्नत व्यक्तियों से ही उन्नत समाज बन सकता है, अतः इससे पूर्व व्यक्ति के घटक शरीर और आत्मा की उन्नति के सम्बन्ध में लिखकर समाज की उन्नति के सम्बन्ध में वेदादेश यहां दिय जा रहा है ।

## संगठन से उन्नति

**ओं संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ ।**
**इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर ॥**

—ऋ० १०।१९१।१

हे ( **वृषन्** ) बलवान् और ( **अर्य** ) श्रेष्ठ ( **अग्ने** ) तेजस्वी ईश्वर ! तुम ( **विश्वानि** ) सब पदार्थों को ( **इत्** ) निश्चय से ( **सं सं आयुवसे** ) एकत्रित कर के संमिलित करते हो, और ( **इळः पदे** ) भूमि अथवा वाणी के स्थान में ( **सं इध्यसे** ) उत्तम प्रकार से प्रकाशित होते हो, इसलिये ( **सः** ) वह तुम ( **नः** ) हम सबके लिये ( **वसूनि** ) सब प्रकार के निवास साधक धन ( **आ भर** ) प्राप्त कराओ ।

हे सर्वशक्तिमान् ! सबसे श्रेष्ठ ईश्वर ! तुम इस संपूर्ण जगत् में संमेलन कार्य करते हो, और सर्वत्र तेज के साथ प्रकाशित हो । इसलिये उन्नति साधक सब धन हम सबको पूर्ण रीति से प्राप्त कराओ ।

**सं गच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।**
**देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥**

—ऋ० १०।१९१।२

हे मनुष्यो ! तुम सब ( **संगच्छध्वं** ) एक होकर प्रगति करो। ( **सं वदध्वं** ) उत्तम प्रकार से संवाद करो । ( **वः मनांसि** ) तुम सबके मन ( **सं जानतां** ) उत्तम संस्कारों से युक्त हों । तथा ( **पूर्वे** ) पूर्वकालीन ( **सं जानानाः देवाः** ) उत्तम ज्ञानी और व्यवहार कुशल लोग ( **यथा** ) जिस प्रकार ( **भागं** ) अपने कर्तव्य का भाग ( **उप-आसते** ) करते आये हैं, उसी प्रकार तुम भी अपना कर्तव्य करते जाओ ।

एक हो जाओ, मिलकर रहो, आपस में उत्तम प्रेमपूर्वक भाषण करो, तथा वादविवाद करके सर्व संमति से बातों का निश्चय करो, तथा अपने मन सुसंस्कार से युक्त करो । जिस प्रकार तुम्हारे पूर्वकालीन बड़े ज्ञानी लोग अपने अपने कर्तव्य

का भाग करते आये हैं, उसी प्रकार तुम भी अपने कर्तव्यों का हिस्सा उत्तम रीति से करो । इस प्रकार बर्ताव करने से तुमको जो उन्नति चाहिए, सो प्राप्त होगी ।

**समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम् ।**
**समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥**

—ऋ० १०।१९१।३

तुम सबका ( **मंत्रः** ) विचार ( **समानः** ) एक हो । ( **समितिः** ) तुम्हारी सभा ( **समानी** ) सबकी एक जैसी हो । ( **मनः समानं** ) तुम सबका मन एक विचार से युक्त हो ( **एषां चित्तं सह** ) इन सबका चित्त भी सब के साथ ही हो। ( **वः** ) तुम सबको ( **समानेन हविषा** ) एक प्रकार के अन्न और उपभोग ( **जुहोमि** ) देता हूँ ।

सबका उद्देश्य, विचार, चिन्तन और खयाल एक ही दिशा से होता रहे । अर्थात् तुम सब में विचारों की भिन्नता न होवे। सभा में जाने का तुम सबको समान अधिकार है । तुम सब में एकता होने के लिए तुम सबको समान विचार और समान उपभोग देता हूँ । अर्थात् तुम में विचारों की एकता और भोगों की समानता रहने से तुम सब में ऐक्य रह सकेगा ।

**समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।**
**समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥**

—ऋ० १०।१९१।४

( **वः आकूतिः** ) तुम सबका ध्येय ( **समानी** ) समान ही हों । ( **वः हृदयानि** ) तुम सब के हृदय ( **समाना** ) समान हों। ( **वः मनः** ) समान हों । ( **वः मनः** ) तुम सबका मन ( **समानं अस्तु** ) समान हो । ( **यथा** ) जिससे ( **वः** ) तुम सबकी ( **सह सु असति** ) शक्ति उत्तम हो ।

सबका उद्देश्य, हृदय का भाव, और मन का विचार एक होने से ही सब में एकता होती है, और संघ का बल बढ़ता है। और सब प्रकार का उत्तम कल्याण प्राप्त होता है ।

इस सूक्त पर विचार—इस सूक्त में प्रथम मन्त्र में भक्तों की परमेश्वर से प्रार्थना है, कि हम सबका योगक्षेम उत्तमरीति से चलने के लिए जो-जो धन आवश्यक है, वे सब दो । यह प्रार्थना सुनने पर परमेश्वर ने कोई धन नहीं दिया, परन्तु साधन बताया । (१) संघ की शक्ति, (२) वादविवाद शक्ति, (३) मन के सुसंस्कार, (४) कर्तव्य तत्पर होने का शील, (५) समान विचार, (६) समान उद्देश्य, (७) समान भाव, (८) समान मन, (९) समान हृदय, (१०) समान उपभोग, आदि से सबका योगक्षेम उत्तमरीति से चल सकता है । सबकी उन्नति का विचार करने को जो सभा हो, वहां जाने का अधि कार भी सबको समान ही होना चाहिए ।। इसके विपरीत अवस्था होने से अवनति होती है । (१) संघशक्ति का अभाव, (२) वक्तृत्वशक्ति का अभाव, (३) मन के कुसंस्कार, (४) स्वकर्तव्य न करने का स्वभाव, (५) विषम विचार, (६) भिन्न उद्देश्य, (७) भिन्न हेतु, (८) विषम मन, (९) संकुचित हृदय, (१०) उपभोगों की विषमता होने से मनुष्यों में संघशक्ति नहीं होती और संघशक्ति के अभाव के कारण उनका नाश होता है ।

## एकता

**सं वो॒ मनां॑सि॒ सं व्र॒ता समाकू॑तीर्नमामसि ।**
**अ॒मी ये विव्र॑ता॒ स्थन॒ तान्व॒: सं न॑मयामसि ॥**

—अथर्व० ६।९४।१

**(वः मनांसि)** आपके मनों को, **(व्रता)** कर्मों को **(आकूतिः)** संकल्प को **(सं सं सं नमामसि)** योग्य रीति से झुकाते हैं । **(अमी ये)** ये जो **(वः वि-व्रताः)** आप के अन्दर विरुद्ध आचरण करनेवाले **(स्थन)** हैं, **(तान्)** उनको **(सं नमयामसि)** एक दिशा से उत्तम प्रकार झुकाते हैं ।

मन, संकल्प और कर्म के व्यवहार ऐसे उत्तम होने चाहियें, कि जिनसे सब की एकता हो जाय । और कभी विरोध न हो सके । इसलिए जो मनुष्य विरुद्ध आचरण

करनेवाले हों, उनको ही एक विचार से युक्त करके अन्यों के अनुकूल बनाना चाहिए ।

**सं जानीध्वं सं पृच्यध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।**

**देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते ॥**

—अथर्व० ६।६४।१

( **सं जानीध्वं** ) उत्तम ज्ञान से युक्त हो, ( **स, पृच्यध्वं** ) आपस में मिलकर रहो, ( **वः मनांसि** ) आपके मन ( **संजानतां** ) उत्तम संस्कार युक्त हों । ( **यथा** ) जिस प्रकार ( **पूर्वे संजानानाः देवाः** ) पूर्व समय के ज्ञानी देवता लोग ( **भागं उपासते** ) अपने-अपने कर्तव्य भाग का पालन करते थे । इसी प्रकार तुम भी अपने कर्तव्य का भाग करते रहो ।

ज्ञान प्राप्त करके आपस में मिल-जुलकर रहना, अर्थात् आपस में द्वेष नहीं करना और संघ शक्ति से रहना चाहिए । इसके पश्चात् अपने मन सुसंस्कारों से परिपूर्ण करने और प्राचीन ज्ञानी पुरुषों के समान अपना शुद्ध व्यवहार करना चाहिए यही उन्नति का मार्ग है ।

**सं वः पृच्यन्तां तन्व१ः सं मनांसि समु व्रता ।**

**सं वोऽयं ब्रह्मणस्पतिर्भगः सं वो अजीगमत् ॥**

—अथर्व० ६।७४।१

( **वः तन्वः** ) आपके शरीर ( **संपृच्यंतां** ) मिलकर रहें । ( **मनांसि सं** ) मन मिलकर रहें, ( **व्रता** ) कर्म मिलकर होते रहें। ( **अयं** ) यह ( **ब्रह्मणः पतिः भगः** ) ज्ञान का पालक ऐश्वर्यमय प्रभु ( **वः सं सं अजीगमत्** ) आप सबको मिलाकर रखे ।।

शरीर, मन, और कर्म से समाज के अंदर समता और एकता रहनी चाहिए । किसी प्रकार भी आपस में विरोध खड़ा नहीं होना चाहिए ।

**संज्ञपनं वो मनसोऽथो संज्ञपनं हृदः ।**

**अथो भगस्य यच्छ्रान्तं तेन संज्ञपयामि वः ॥**

—अथर्व० ६।७४।२

**( वः मनसः )** आपके मन का **( संज्ञपनं )** उत्तम ज्ञान, और **( हृदः )** हृदय का **( संज्ञपनं )** संतोष कारक भाव **( अथो )** तथा **( भगस्य श्रान्तं )** भाग्य का जो श्रम अथवा परिश्रम है, **( तेन )** उससे **( वः संज्ञपयामि )** तुमको संतुष्ट करता हूँ ।

मन के अंदर ज्ञान और हृदय में शांति रखनी चाहिए । तथा परिश्रम से जो पुरुषार्थ किये जाते हैं, उससे ही संतुष्टि होनी चाहिए ।।

## वैदिक समाज

**आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम् ॥ दोग्ध्रीं धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम । निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु ॥ फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम् ॥ योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥**

—यजुः० २२।२२

हे **( ब्रह्मन् )** सर्वमहान् भगवान् ! हमारे **( राष्ट्रे )** राष्ट्र में **( ब्रह्मवर्चसी )** ब्रह्मतेजयुक्त, ज्ञानदीप्तिसंपन्न **( ब्राह्मण )** ब्राह्मण **( आ जायताम् )** सब ओर हों । और **( शूरः )** बहादुर **( इषव्यः )** बाणविद्या, शस्त्रास्त्रसंचालन में चतुर **( अतिव्याधी )** दुष्टों को अत्यन्त उद्विगन करनेवाला (महारथः) महारथी **( राजन्यः )** क्षत्रियवर्ग हो । तथा **( दोग्ध्री धेनुः )** दूध देनेवाली गौवें, **( वोढा अनड्वान् )** भार उठानेवाले बैल **( आशुः सप्तिः )** शीघ्रकारी घोड़े आदि हों । **( अस्य यजमानस्य पुत्रः )** इस यजमान का पुत्र **( युवा )** जवान होकर **( सभेयः )** सभा कार्य में निपुण **( जिष्णुः )** जयशील **( रथेष्ठाः )** रमणीय-साधन से युक्त और **( वीरः जायतां )** वीर होवे । **( निकामे निकामे )** अपेक्षित समय पर **( नः )** हमारे लिए **( पर्जन्यः वर्षतु )** बादल बरसता रहे। **( नः ओषधयः )** हमारी ओषधी वनस्पतियां **( फलवत्यः पच्यन्ताम् )** फलयुक्त रहें । तथा **( नः योगक्षेमः )** हमारा योगक्षेम **( कल्पताम् )** भली प्रकार चले ।

कितना सुन्दर आदर्श है। सबकी हित कामना के भाव जैसे वैदिक धर्म में हैं, वैसे अन्यत्र नहीं हैं। राष्ट्र की=समाज उन्नति के लिए ब्राह्मणादि सब वर्णों की आवश्यकता है। यह कैसे होने चाहिए यह भी वेद ने स्पष्ट बतलाया है। संसार यात्रा के चलाने के लिए जिन पदार्थों की आवश्यकता होती है, उन सबकी कामना इस मन्त्र में की गई है।

किसी नीतिकार ने कहा है—

**अयं निज परोवेति गणना लघु चेतसाम्।**
**उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥**

यह मेरा है यह तेरा है जो इस प्रकार की दिन-रात चर्चा करते हैं, वे छोटे दिल वाले हैं जो सारे संसार को अपना परिवार समझते हैं वे उदार चरित्र के व्यक्ति होते हैं।

**उदाहरण**—कोई व्यक्ति भारत से अमेरिका जाता है तो प्रश्न करने वाले पूछते हैं कि आप कहां के रहने वाले हैं। अर्थात् किस देश का वासी है, वह उत्तर देता है "मेरा देश महान्" मैं भारत (इण्डिया) का रहने वाला हूँ। गर्व से भारत वर्ष को अपना देश बताता है, भारत देश के प्रति स्वाभिमान रखता है। जब वही व्यक्ति अमेरिका से भारत के लिये प्रस्थान करता है तो वायुयान द्वारा बम्बे एयरपोर्ट पर उतरता है, पुनः उन से पूछते हैं कि आप किस प्रान्त के रहने वाले हैं, वह उत्तर देता है कि मैं मध्यप्रदेश का रहने वाला हूँ। गर्व से पूरे मध्यप्रदेश को अपना प्रदेश मानता है। मध्यप्रदेश पहुंच कर वह कहता है कि मेरा नाम ब्रह्मचारी विपिन है। मेरे पिताश्री का नाम सुरेन्द्र भदौरिया है और मैं क्यारीपुरा जि० भिण्ड का रहने वाला हूँ, वर्तमान में मैं गुरुकुल होशंगाबाद में पढ़ता हूँ, जि० होशंगाबाद में नर्मदा के तट पर गुरुकुल स्थित है, इस गुरुकुल में बहुत से ब्रह्मचारी विद्याध्ययन करते हैं, गुरुकुल में मेरा निवास स्थान यह तख्त है, मेरे गुरु का स्थान है, ब्रह्मचारियों का पृथक् पृथक् शयन तख्त है। कहने का अभिप्राय यह है कि अपने देश भारत को छोड़ा तो बहुत बड़ा

हो गया । ज्यों–ज्यों देश–प्रान्त को पकड़ता गया तो तख्त तक सीमित होकर रह गया । इसलिए उदार बनने में ही महानता है, सीमति में हम सब का माप दण्ड छोटा ही होता है ।

## स्वयं खाने वाला पाप को खाता है

**मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य ।**
**नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी ॥**

ऋ० १०-११७-६

बुद्धि–शून्य अर्थात् मूर्ख आदमी मुफ्त का भोजन पाने का यत्न करता है । अर्थात् अपने भोजन के लिए कुछ करना नहीं चाहता । जो अपने हितैषी का पोषण नहीं करता । और न अपने साथी का पोषण करता है उसका ऐसा व्यापार उसके नाश का ही कारण है । जो अकेला खाने वाला है वह केवल पाप का भागी होता है । मैं सत्य कहता हूँ अर्थात् इस कथन के सच होने में किञ्चित मात्र भी सन्देह नहीं है ।